हाशिये की आवाज़

संघर्षरत् हाशिये के लोगों की प्रथम मासिक पत्रिका

संपादक
डेन्ज़िल फर्नांडिस

संयुक्त संपादक
कमलकान्त प्रसाद

सहायक संपादक
रत्नेश कातुलकर

सम्पादन सहयोग
सैयद परवेज़

सदस्यता शुल्क
वार्षिक : ₹ 150
द्विवार्षिक : ₹ 300
आजीवन : ₹ 3500

सदस्यता शुल्क की राशि डिमांड ड्राफ्ट/पोस्टल ऑर्डर/मनीऑर्डर द्वारा सोशल एक्शन ट्रस्ट के नाम पर भेजें।

सोशल एक्शन ट्रस्ट
10-इन्स्टीट्यूशनल एरिया
लोदी रोड, नई दिल्ली–110003
फोन : 011-49534132 / 33
वेब: www.isidelhi.org.in
publication@isidelhi.org.in

'हाशिये की आवाज़' के जिन सदस्यों को किन्ही तकनीकी कारणों से अपनी प्रति प्राप्त नहीं हुई है, वे इस विषय में हमें तीन माह के भीतर सूचित कर निःशुल्क वैकल्पिक प्रति प्राप्त कर सकते है। किन्तु तीन महीनों के उपरान्त मिलने वाली सूचना पर हम आपको निःशुल्क प्रति उपलब्ध कराने में असमर्थ रहेंगे।

अहम् सवाल

मुजफ्फरनगर हिंसा कितने सुरक्षित हैं मुसलमान?

सैय्यद मो. रागिब, अभय कुमार
शोधार्थी, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय

मुजफ्फरनगर हिंसा की तबाही की आग अभी भी ठण्डी नहीं हुई है। लगभग पांच महीने गुजर जाने के बाद भी हजारों लोग मुजफ्फरनगर और शामली जिले के दर्जनों राहत शिविरों में जिन्दगी और मौत के बीच जूझ रहे हैं। सर्द लहर की वजह से जहां हमें शिविरों में कुछ समय के लिए ठहरना दुश्वार गुजर रहा था, वहीं हजारों शरणार्थी खुले आसमान में रहने को मजबूर हैं। अखबारों के मुताबिक राहत कैम्पों में लोगों के ठण्ड और अन्य बीमारियों से मरने की खबर अभी भी आ रही है। मरने वालों में बच्चों की संख्या ज्यादा बतायी जाती है।

हमलोगों ने कुछ सप्ताह पहले शामली जिले के कैराना के पास लगे कई शविरों में तीन दिन गुजारे। अकबरपुर, सोनाटी, रोटन ब्रिज और मंसूरा गांव से सटे कैम्पों में हमने जो देखा, उसे शब्दों में बयान करना काफी मुश्किल और दर्दनाक है। शिविरों में रह रहे ये मुसलमान स्त्री-पुरूष और बच्चे दोहरी मार के शिकार हैं, जहां एक तरफ साम्प्रदायिक शक्ति आरएसएस और भाजपा ने किसान जाटों के अन्दर मुस्लिम मुखालिफ़ ज़हर भरा और माहौल बिगाड़ने में कोई कमी नहीं छोड़ी, वहीं दूसरी तरफ उनकी शुभचिन्तक होने का दावा करने वाली तथाकथित सेक्यूलर सरकार ने उनकी कोई सुध तक नहीं ली और उन्हें लूटने एवं मरने के लिए अकेला छोड़ दिया।

कुछ दिनों पहले जिस तरह से समाजवादी पार्टी के नेता नरेश अग्रवाल ने बीजेपी के सुर में सुर मिला कर साम्प्रदायिक हिंसा बिल का विरोध किया, उससे एक बार फिर साबित हो गया है कि सेक्यूलर पार्टियां भी साम्प्रदायिक तत्वों का मठ बनती जा रही हैं। यह कितनी अफसोस की बात है कि मुसलमानों के वोट से सत्ता के गलियारों में पहुंची सपा सरकार ने अपनी मुस्लिम दुश्मनी का ऐसा प्रदर्शन किया कि उससे बीजेपी और कांग्रेस के द्वारा किए गए पिछले फसादों के रिकॉर्ड टूटते नज़र आ रहे हैं। साम्प्रदायिकता की आग में घी डालने का काम स्थानीय मीडिया ने भी कुछ कम नहीं किया, जिसने यह अफवाह फैलाई कि इन शिविरों में रहने वाले शरणार्थियों के बीच आईएसआई के घुसपैठिए भी अपनी पहुँच बना चुके हैं।

इन तमाम अफवाहों और सरकार की नाकामी के बावजूद बहुत सारे देश-विदेश के मुस्लिम और गैर-मुस्लिम संस्थाएं और सामाजिक कार्यकर्ता मदद के लिए आगे आए हैं। जिस दिन हमलोग शिविरों में थे, उसी दिन हैदराबाद, अलीगढ़, मऊ और लन्दन से आए हुए लोग शरणार्थियों के बीच राहत सामग्री का वितरण कर रहे थे। इन सभी सकारात्मक पहलुओं के पीछे एक कड़वी सच्चाई भी छिपी हुई है। हमलोगों ने पाया कि वहां कुछ ऐसे भी मुस्लिम तत्व थे, जो अपने आप को शिविरों का प्रधान, जिम्मेदार और मुहाफिज कहते थे, मगर इन मुसलमानों ने अपनी कारकर्दगी से इनसानियत को शर्मशार कर दिया। रोटन ब्रिज के एक जिम्मेदार स्थानीय मुस्लिम नेता ने शरणार्थियों से बदसलूकी की। लोगों ने यह आरोप लगाया कि इस नेता ने कैम्प की कुछ औरतों की इज्जत के साथ खिलवाड़ करने की भी कोशिश की।

शरणार्थियों ने इन बातों का जिक्र डर और खौफ़ के साये में किया। हम सब वहां बच्चों के लिए एक

स्कूल खोलने गए थे। हमारा मकसद यह था कि मुसलमानों की शैक्षणिक और सामाजिक पिछड़ेपन को ध्यान में रखते हुए शिविरों में स्कूल खोलना बहुत जरूरी है। इस स्कूल को खोलने के लिए सामाजिक संस्था 'खुदाई खिदमतगार' ने अहम भूमिका निभाई। जब हमलोग शिविरों में घूम-घूम कर लोगों से शिक्षा की अहमियत पर रोशनी डाल रहे थे और उनसे अपील कर रहे थे कि वे अपने बच्चों को इस स्कूल में भेजें, जहां शिक्षा, किताब और अन्य सहूलियतें मुफ्त में प्रदान की जाएंगीं। इन सब बातों को सुनकर हमें शरणार्थियों ने पलटकर जबाब दिया कि एक स्थानीय तथाकथित मुस्लिम नेता ने पिछली रात को उनसे स्कूल के नाम पर 50-50 रुपये ऐंठ लिए। लोगों ने हमसे यह सवाल पूछा कि एक तरफ मुफ्त शिक्षा की बात कर रहे, तो फिर उनसे रुपये क्यों लिए गए? कुछ घण्टे के अन्दर ही हमें यह लगने लगा कि दाल में जरूर कुछ काला है।

इन सारी बातों का जिक्र करने का हमारा उद्देश्य यह है कि हमें मुसलमानों के ऊपर हो रहे बाहरी और अन्दरूनी खतरों से सतर्क रहने की जरूरत है और शरणार्थियों की जिन्दगी को और भी गंभीरता से देखने की जरूरत है।

शरणार्थियों ने आगे यह भी बताया कि उपरोक्त मुस्लिम नेता राहत सामग्री और नगद राशि का भी घोटाला करता है। इसी दौरान मुस्लिम नेता का एक रिश्तेदार वहां आया और लोगों को चिल्ला-चिल्लाकर डांटने लगा। उसकी झल्लाहट की वजह यह थी कि शरणार्शी मायावती के जन्म दिवस के उपलक्ष्य में लखनऊ की रैली में जाने से कतरा रहे थे। लोगों ने काफी बहाना बनाया, मगर आखिरकार दर्जनों पकड़े गए और इन लोगों को जानवरों की तरह ट्रैक्टर की ट्रॉली में लाद दिया गया। उनके जाने के बाद औरतों ने गुस्से में कहा कि ये लोग हमारे मर्द को रैली के लिए ले गए, मगर अब उनकी हिफाजत कौन करेगा?

इस बेबस आवाज़ ने हमें कैम्प को एक दूसरे तरीके से देखने को मजबूर किया। बहुत सारी बातें हम मर्द होने की वजह से औरतों के बारे आसानी से नहीं समझ पाते हैं। आपको जानकर ये हैरानी नहीं होनी चाहिए कि औरतें कैम्प में भी सुरक्षित नहीं हैं। पहले साम्प्रदायिक ताकतों ने उनकी अस्मिता को तार-तार किया, मगर अब उनकी इज्जत पर हमला कर बड़े ही खामोशी के साथ अंजाम दिया जाता है। कैम्प के अन्दर शारीरिक शोषण की घटनाएं बढ़ रही हैं। इसकी वजह यह भी है कि कैम्पों में व्यक्ति की निजता (प्राईवेसी) का अभाव होता है। महिला डॉक्टरों की कमी की वजह से औरतों की कई सारी बीमारियों का ईलाज नहीं हो पा रहा है।

बातचीत के दौरान हमने पाया कि इन चार महीनों के कैम्प में बसी जिन्दगी के दौरान बहुत सारी औरतों ने बच्चों को जन्म दिया और कई महिला गर्भवती भी हैं, मगर उनके लिए कोई विशेष सुविधा नहीं है। हमने कैम्प में कई सारी राहत सामग्री पाई; जैसे–अनाज, कपड़ा, रजाई, खिलौने इत्यादि, मगर किसी ने यह नहीं सोचा कि औरतों के लिए माहवारी के दौरान इस्तेमाल होने वाले कपड़े (सैनिटेरी नैपकिन) भी भेज दिये जाएं, किसी ने यह भी नहीं सोचा कि गर्भवती महिलाओं के लिए विशेष भोजन की व्यवस्था की जाए।

औरतों के बाद बात आती है बच्चों की, उन पर एक नज़र डाल ली जाए। शिविर में रहने वाले अधिकतर बच्चे पढ़ने-लिखने के माध्यम में काफी पीछे हैं। अधिकांश अभिभावक अपने बच्चों के प्रति अपनी जिम्मेदारी उतनी ही समझते हैं कि जितनी ही जल्दी हो सके, उनके बच्चों की शादी हो जाए। जब एक 18-20 साल के लड़के से स्कूल में आने के लिए कहा गया, तो उसने पलटकर जबाब दिया–"अरे भाई, पढ़ने तो अब मेरा बेटा जाए।" यह हमारे लिए अत्यन्त चौंकाने वाला अनुभव था, जब हमने कई ऐसे लड़कों को पाया, जिनकी उम्र 20-25 वर्ष से ज्यादा नहीं है लेकिन वे कई बच्चों के माता-पिता हैं।

इसमें कोई शक नहीं है कि साम्प्रदायिक हिंसा इसलिए कराई जाती है कि मुसलमानों को सामाजिक, शैक्षणिक और आर्थिक तौर से पीछे धकेला जाए। इसके पीछे चाल यह है कि मुसलमानों के अन्दर असुरक्षा का डर इतना भर दिया जाए कि वे रोटी कपड़ा, मकान, शिक्षा और रोजगार के बारे में कभी सोच भी नहीं पाएं। मगर इसके साथ-साथ यह भी नहीं भूलना चाहिए कि कैम्प की जिन्दगी भी असुरक्षित है। कैम्पों के अन्दर भी मुसलमान एक दूसरी मुसीबत में फंसे हुए हैं। इसलिए हम सब की यह जिम्मेदारी है कि मुसलमानों के लिए हो रहे राहत कार्य और पुनर्वास योजना बनाते वक्त बाहरी और अन्दरूनी खतरों को भी ध्यान में रखा जाए। □□

फोटो स्रोत्र http://www.indiatvnews.com/news/india/muzaffarnagar-riots-protesters-demand-rehabilitation-of-victims-28681.html